मेसर्स यूरेंद्र ट्रेडिंग कंपनी

बनाम

मेसर्स जुग्गीलाल कमलापत जूट मिल्स कंपनी लिमिटेड और अन्य

(सिविल अपील क्रमांक 8400/2017 आदि)

सितम्बर 19,2017

(ए.के. सीकरी और अशोक भूषण, जे.जे.)

दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016:

धारा 9(5) प्रावधान - कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू करने के लिए आवेदन में खामियों को दूर करने के लिए सात दिनों की समय सीमा, चाहे वह अनिवार्य हो या प्रत्यक्ष - माना गया: सात दिनों के भीतर दोषों को दूर करने का प्रावधान निर्देशिका है और प्रकृति में अनिवार्य नहीं है - हालाँकि, यदि दोषों को सात दिनों के भीतर दूर नहीं किया जाता है, तो आवेदक, दोषों को दूर करने के बाद आवेदन को दोबारा दाखिल करते समय, पर्याप्त मामला बताते हुए एक आवेदन दाखिल करना आवश्यक है कि दोषों को सात दिनों के भीतर क्यों हटाया/ठीक नहीं किया जा सका - धारा 9(5) के तहत आवेदन पर निर्णय प्राधिकारी द्वारा तभी विचार किया जा सकता है जब वह संतुष्ट हो जाए कि देरी के लिए पर्याप्त मामला बनता है।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया-

1. राष्ट्रीय कंपनी कानून अपीलीय न्यायाधिकरण (एनसीएलएटी) ने इस निष्कर्ष पर पहुंचते समय कोई वैध कारण नहीं दिया है कि दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 की धारा 9 के उप-धारा (5) के प्रावधान में उल्लिखित अवधि अनिवार्य है। .

संहिता की धारा 12 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए और दिवाला समाधान प्रक्रिया को पूरा करने की समय सीमा 180 दिन बताई गई है, जिस अवधि को और 90 दिनों तक बढ़ाया जा सकता है, धारा 9 की उप-धारा (5) के परंतुक के प्रावधानों को उस तरीके से समझने का शायद ही कोई औचित्य प्रदान करता है जिस तरह से यह ट्रिब्यूनल द्वारा किया जाता है। यह ध्यान में रखना होगा कि धारा 12 में उल्लिखित 180 दिनों की सीमा भी आवेदन स्वीकार करने की तारीख से शुरू होती है। उससे पहले की अवधि, जो धारा 9 के तहत आवेदन दाखिल करने के बाद (या धारा 7 या धारा 10 के तहत उस मामले के लिए) खर्च की जाती है, चाहे आवेदन की जांच करने में निर्णायक प्राधिकारी की रजिस्ट्री द्वारा या आवेदक द्वारा दोषों को दूर करने में या आवेदन स्वीकार करते समय निर्णायक प्राधिकारी द्वारा इस पर ध्यान नहीं दिया जाएगा। दरअसल, जब तक आपत्तियां दूर नहीं हो जातीं, तब तक इसे वैध रूप से दाखिल किया गया आवेदन नहीं माना जाएगा, क्योंकि आवेदन हर तरह से पूरा होने के बाद ही उस पर विचार करना जरूरी है। इस परिदृश्य में, परंतुक में निहित सात दिनों की अवधि को अनिवार्य बनाना, इस न्यायालय की सराहना नहीं करता है। इस अवधि को अनिवार्य मानने से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होने वाला है। किसी दिए गए मामले में, सात दिनों के भीतर दोषों को दूर न कर पाने के महत्वपूर्ण, वैध और उचित कारण हो सकते हैं। इसके बावजूद, इसका प्रभाव आवेदन को अस्वीकार करना होगा। [पैरा 20) [761-एफ-एच; 762-ए-बी)

2. क्या ऐसी अस्वीकृति को गुण-दोष के आधार पर आवेदन को अस्वीकार करने के रूप में माना जाएगा, जिससे आवेदन को नया आवेदन दाखिल करने से रोक दिया जाएगा या इसे एक प्रशासनिक आदेश के रूप में माना जाएगा, चूंकि अस्वीकृति इस कारण से हुई थी कि दोषों को दूर नहीं किया गया था और आवेदन की गुणवत्ता के आधार पर जांच नहीं की गई थी। पहले मामले में यह न्याय का मखौल होगा कि भले ही आवेदक का मामला योग्यता के आधार पर बहुत मजबूत हो, फिर भी आवेदक को

उसके आवेदन पर योग्यता के आधार पर फैसला किए बिना बाहर का रास्ता दिखा दिया जाता है। यदि बाद वाले विकल्प को स्वीकार कर लिया जाता है, तो पहली बार में आवेदन को अस्वीकार करने से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा क्योंकि आवेदक को सभी पहलुओं में पूर्ण नया आवेदन दाखिल करने की अनुमति होगी, जिस पर विचार करना होगा। इस प्रकार, किसी भी मामले में, उपरोक्त प्रावधान को अनिवार्य मानने से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होता है। [पैरा 21) [762-सी-ई)

3. संहिता के विभिन्न प्रावधानों से संकेत मिलता है कि तीन चरण हैं। पहला चरण आवेदन दाखिल करना है। निर्णायक प्राधिकारी की रजिस्ट्री को यह पता लगाने के लिए इसकी जांच करनी चाहिए कि क्या यह सभी मामलों में पूर्ण है या इसमें कुछ खामियां हैं। यदि यह पूरा हो गया है, तो इसे निर्णायक प्राधिकारी के समक्ष प्रारंभिक सुनवाई के लिए पोस्ट किया जाएगा। यदि खामियां हैं, तो आवेदक को उन कमियों के बारे में सूचित किया जाएगा ताकि उन्हें दूर किया जा सके। इसके लिए सात दिन का समय दिया गया है. एक बार दोष दूर हो जाने पर आवेदन निर्णय प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा। जब आवेदन निर्णायक प्राधिकारी के समक्ष सूचीबद्ध किया जाता है, तो उसे आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करने का निर्णय लेना होता है। इस प्रयोजन के लिए निर्णायक प्राधिकारी को चौदह दिन का समय दिया जाता है। आवेदन स्वीकार होने के बाद दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू होती है। यह समाधान प्रक्रिया 180 दिनों के भीतर पूरी की जानी है, जिसे कुछ मामलों में 90 दिनों तक बढ़ाया जा सकता है। जहां तक पहले चरण का सवाल है, इसका दिवाला समाधान प्रक्रिया पर कोई असर नहीं पड़ता है, क्योंकि जब तक आवेदन हर तरह से पूरा नहीं होता है, निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को उससे निपटना नहीं चाहिए। यह दूसरे चरण में है कि निर्णायक प्राधिकारी को अपना दिमाग लगाना है और निर्णय लेना है कि आवेदन स्वीकार किया जाना चाहिए या अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए। यहां न्यायनिर्णयन प्रक्रिया शुरू होती है. हालाँकि, इसके बावजूद, जब आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करने का निर्णय लेने के

लिए निर्णायक प्राधिकारी को क़ानून द्वारा दी गई चौदह दिनों की यह अवधि निर्देशिका है, तो पहले चरण के संबंध में इसे अनिवार्य बनाने का कोई कारण नहीं है, जो निर्णय-पूर्व चरण है। (पैरा 22) (762-ई-एच; 763-ए-डी)

4. आपत्तियों को दूर न करने से आवेदक को कुछ भी हासिल नहीं होता क्योंकि जब तक आपत्तियां दूर नहीं हो जातीं, ऐसे आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा। इसलिए, दोषों को यथाशीघ्र दूर करना आवेदक के हित में है। [पैरा 231 (763-एफजे

5. इस प्रकार, सात दिनों के भीतर दोषों को दूर करने का प्रावधान करने वाली धारा 9 (एस) का प्रावधान निर्देशिका है और प्रकृति में अनिवार्य नहीं है। हालाँकि, कभी-कभी आवेदक या उनके वकील दिए गए समय के भीतर आपत्तियों को दूर न करके ढिलाई दिखा सकते हैं और यह मान लेते हैं कि उन्हें ऐसे उद्देश्य के लिए असीमित समय दिया जाएगा। ऐसे मामले भी हो सकते हैं, जहां ऐसे आवेदन प्रकृति में तुच्छ हों, जिन्हें कुछ अप्रत्यक्ष उद्देश्यों के लिए दायर किया गया हो और आवेदक चाहते हों कि वे आवेदन लंबित रहें और इसलिए, दोषों को दूर कर देंगे। ऐसे मामलों से निपटने के लिए एक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता है। इस प्रकार, निर्देशिका प्रकृति के प्रावधानों की व्याख्या करते समय, यह निर्धारित किया जा सकता है कि यदि आपत्तियों को सात दिनों के भीतर दूर नहीं किया जाता है, आवेदक आपत्तियों को दूर करने के बाद आवेदन को दोबारा दाखिल करते समय, लिखित रूप में एक आवेदन दाखिल करें जिसमें पर्याप्त मामला दर्शाया गया हो कि आवेदक सात दिनों के भीतर आपत्तियों को क्यों नहीं हटा सका। जब ऐसा कोई आवेदन निर्णय प्राधिकारी के समक्ष प्रवेश/आदेश के लिए आता है, तो निर्णय प्राधिकारी को यह तय करना होगा कि क्या सात दिनों की अवधि के बाद दोषों को दूर न करने के लिए पर्याप्त कारण दिखाया गया है। एक बार जब न्यायनिर्णयन प्राधिकारी संतुष्ट हो जाता है कि ऐसा कोई मामला दिखाया गया है,

तभी वह गुण-दोष के आधार पर आवेदन पर विचार करेगा। [पैरा 24 और 251 [763-एफ-एच; 764-ए-सीआई

कैलाश बनाम नन्हकू और अन्य (2005) 4 एससीसी 480: [2005)3 एससीआर 289 - पर निर्भर।

केस कानून संदर्भ

[2005) 3 एससीआर 289	निर्भर	पैरा 25

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 8400/2017

कंपनी अपील (एटी) संख्या 9/2017 में नई दिल्ली में राष्ट्रीय कंपनी कानून अपीलीय न्यायाधिकरण के आक्षेपित अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 01.05.2017 से

साथ

सिविल अपील संख्या 15090-15091/2017

कृष्णन वेणुगोपाल, वरिष्ठ वकील, सुनील फर्नांडीस, सुश्री आस्था शर्मा, सुश्री नूपुर कुमार, गौरव केजरीवाल, प्रदीप अग्रवाल, सुजीत केशरी, अपीलकर्ता के वकील।

नीरज किशन कौल, वरिष्ठ अधिवक्ता, अरुणाभ चौधरी, अंकुर चावला, सुश्री कनिका सिंह, संग्राम सिंह, आर.के. मोहित गुप्ता, अक्षय साहनी, वैभव तोमर, मिस सीओएसी, डॉ. कैलाश चंद, सतीश विग, अक्षत कुमार, उत्तरदाताओं के वकील।

न्यायालय का फैसला **न्यायाधीश ए.के.सीकरी** द्वारा सुनाया गया।

1. अपील दायर करने की अनुमति दी गई है और 2017 की डायरी संख्या 22835 में देरी को माफ किया गया है।

2. हालांकि इस मामले का एक पुराना इतिहास भी है, तत्काल अपील में, हम राष्ट्रीय कंपनी कानून अपीलीय न्यायाधिकरण (इसके बाद 'एनसीएलएटी' के रूप में संदर्भित) द्वारा पारित 01 मई,2017 के आदेश की शुद्धता को लेकर चिंतित हैं। जिससे यह माना जाता है कि दिवाला और दिवालियापन संहिता, 20 I 6 (संक्षेप में, 'कोड') की धारा 9 की उप-धारा (5) के प्रावधान में निर्धारित सात दिनों का समय अनिवार्य है और यदि किसी कॉर्पोरेट देनदार के खिलाफ कॉर्पोरेट दिवाला समाधान शुरू करने के लिए 'ऑपरेशनल क्रेडिटर' द्वारा दायर आवेदन में निहित दोषों को ऐसी आपत्तियों को हटाने के लिए निर्णायक प्राधिकारी द्वारा दिए गए नोटिस की प्राप्ति के सात दिनों के भीतर दूर नहीं किया जाता है, तो संहिता की धारा 9 के तहत दायर किया गया ऐसा आवेदन खारिज किया जा सकता है। एनसीएलएटी ने अपने निर्णय के लिए कानून का जो सटीक प्रश्न तैयार किया था, उसका निम्नलिखित प्रभाव है:

> "क्या किसी याचिका को स्वीकार करने या अस्वीकार करने या दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू करने के लिए दिवाला एवं दिवालियापन संहिता, 2016 (इसके बाद संहिता 2016 के रूप में संदर्भित) में निर्धारित समय सीमा अनिवार्य है?"

3. संहिता के भाग II का अध्याय II कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया से संबंधित है। संहिता की धारा 7 के तहत, वित्तीय ऋणदाता (धारा 5(7) में निहित परिभाषा के अनुसार) कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू कर सकता है। दूसरी ओर, धारा 8, परिचालन ऋणदाता द्वारा दिवाला समाधान से संबंधित है। संहिता की धारा 5(2) में परिचालन ऋणदाता को परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है एक ऐसा व्यक्ति जिस पर परिचालन ऋण बकाया है और इसमें कोई भी व्यक्ति शामिल है जिसे ऐसा ऋण कानूनी रूप से सौंपा या स्थानांतरित किया गया है। यह धारा प्रदान करती है कि यदि धारा 2(12) के अर्थ के अंतर्गत उक्त ऋण के भुगतान में 'डिफॉल्ट' हुआ है,

तो ऐसा परिचालन ऋणदाता कॉर्पोरेट देनदार को डिफॉल्ट में शामिल राशि के भुगतान की मांग करते हुए एक डिमांड नोटिस भेज सकता है। इस संबंध में निर्धारित तरीके से दस दिन का नोटिस देते हुए। कॉर्पोरेट देनदार को किसी विवाद के अस्तित्व के बारे में परिचालन ऋणदाता के ध्यान में लाने के लिए दस दिन का समय दिया जाता है, हालांकि, अवैतनिक परिचालन ऋण के पुनर्भुगतान के लिए अपेक्षित प्रमाण भेजें। हालाँकि, यदि भुगतान प्राप्त नहीं हुआ है या विवाद की सूचना नहीं मिली है, तो परिचालन ऋणदाता कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू करने के लिए धारा 9 के तहत एक आवेदन दायर कर सकता है। चूँकि हम इस प्रावधान से चिंतित हैं, इसलिए इसे पूरी तरह से नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

> "9. परिचालन ऋणदाता द्वारा कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू करने के लिए आवेदन। - (1) धारा 8 की उप-धारा (1) के तहत भुगतान की मांग करने वाले नोटिस या चालान की डिलीवरी की तारीख से दस दिनों की अवधि की समाप्ति के बाद , यदि परिचालन ऋणदाता को कॉर्पोरेट देनदार से भुगतान नहीं मिलता है या धारा 8 की उपधारा (2) के तहत विवाद की सूचना नहीं मिलती है, तो परिचालन ऋणदाता कॉर्पोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया शुरू करने के लिए एड्यूडिकेटिंग अथॉरिटी के समक्ष एक आवेदन दायर कर सकता है।
>
> (2) उप-धारा (I) के तहत आवेदन ऐसे प्रारूप और तरीके से और ऐसे शुल्क के साथ दायर किया जाएगा जो निर्धारित किया जा सकता है।
>
> (3) परिचालन ऋणदाता, आवेदन के साथ-साथ यह करेगा-
>
> "(ए) कॉर्पोरेट देनदार को परिचालन ऋणदाता द्वारा वितरित भुगतान या मांग नोटिस की मांग वाले चालान की एक प्रति;

(बी) इस आशय का एक हलफनामा कि अवैतनिक परिचालन ऋण के विवाद के संबंध में कॉर्पोरेट देनदार द्वारा कोई नोटिस नहीं दिया गया है; •

(सी) परिचालन ऋणदाता के खातों को बनाए रखने वाले वित्तीय संस्थानों से प्रमाण पत्र की एक प्रति जो पुष्टि करती है कि कॉर्पोरेट देनदार द्वारा अवैतनिक परिचालन ऋण का कोई भुगतान नहीं किया गया है; और

(डी) ऐसी अन्य जानकारी जो निर्दिष्ट की जा सकती है।

(4) इस धारा के तहत कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू करने वाला एक परिचालन ऋणदाता, अंतरिम समाधान पेशेवर के रूप में कार्य करने के लिए एक समाधान पेशेवर का प्रस्ताव कर सकता है।

(5) निर्णायक प्राधिकारी, उपधारा (2) के तहत आवेदन की प्राप्ति के चौदह दिनों के भीतर, एक आदेश द्वारा-

(i) आवेदन स्वीकार करें और ऐसे निर्णय की सूचना परिचालन ऋणदाता और कॉर्पोरेट देनदार को दें, यदि,-

"(ए) उप-धारा (2) के तहत किया गया आवेदन पूरा हो गया है;

(बी) अवैतनिक परिचालन ऋण का कोई पुनर्भुगतान नहीं है;

(सी) कॉर्पोरेट देनदार को भुगतान के लिए चालान या नोटिस परिचालन ऋणदाता द्वारा वितरित किया गया है;

(डी) परिचालन ऋणदाता को विवाद की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है या सूचना उपयोगिता में विवाद का कोई रिकॉर्ड नहीं है; और

(ई) उप-धारा (4) के तहत प्रस्तावित किसी भी समाधान पेशेवर के खिलाफ कोई अनुशासनात्मक कार्यवाही लंबित नहीं है, यदि कोई हो।

(ii) आवेदन को अस्वीकार करें और ऐसे निर्णय की सूचना परिचालन ऋणदाता और कॉर्पोरेट देनदार को दें, यदि-

"(ए) उप-धारा (2) के तहत किया गया आवेदन अधूरा है;

(बी) अवैतनिक परिचालन ऋण का पुनर्भुगतान हो गया है;

(सी) लेनदार ने कॉर्पोरेट देनदार को भुगतान के लिए चालान या नोटिस नहीं दिया है;

(डी) विवाद की सूचना परिचालन ऋणदाता को प्राप्त हुई है या सूचना उपयोगिता में विवाद का रिकॉर्ड है; या• • -

(ई) किसी भी प्रस्तावित समाधान पेशेवर के खिलाफ कोई अनुशासनात्मक कार्यवाही लंबित है:

बशर्ते कि न्यायनिर्णयन प्राधिकारी, खंड (ii) के उप-खंड (ए) के तहत किसी आवेदन को खारिज करने से पहले, आवेदक को न्यायनिर्णायक प्राधिकारी से ऐसे नोटिस की प्राप्ति की तारीख से सात दिनों के भीतर अपने आवेदन में दोष को सुधारने के लिए एक नोटिस देगा। .

(6) कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया इस धारा की उप-धारा- (5) के तहत आवेदन स्वीकार होने की तारीख से शुरू होगी।"

4. उपरोक्त प्रावधान का क्षेत्र यह प्रतिबिंबित करेगा कि परिचालन ऋणदाता या निर्णायक प्राधिकारी द्वारा कुछ कार्रवाई करने के लिए समय सीमा का उल्लेख किया

गया है। धारा 9 की उप-धारा (1) के अनुसार, भुगतान की मांग करने वाले नोटिस या चालान की डिलीवरी से कई दिनों की अवधि समाप्त होने के बाद आवेदन दायर किया जा सकता है, जो धारा 8 में निहित प्रावधानों के अनुरूप है जो कॉर्पोरेट देनदार को धारा 8 की उपधारा (2) में उल्लिखित कोई भी कदम उठाने के लिए दस दिन का समय देता है। धारा 9 की उपधारा (2) के अनुसार, परिचालन ऋणदाता को निर्धारित फॉर्म और तरीके से आवेदन दाखिल करना होता है, जिसके साथ अपेक्षित/निर्धारित शुल्क भी संलग्न करना होता है। उप-धारा (3) परिचालन ऋणदाता पर उसमें निर्धारित जानकारी प्रस्तुत करने का दायित्व डालती है। एक बार जब इस तरह का आवेदन दायर किया जाता है और न्यायनिर्णयन प्राधिकारी द्वारा प्राप्त किया जाता है, तो सूचना उपयोगिता के रिकॉर्ड से या परिचालन ऋणदाता द्वारा प्रस्तुत अन्य साक्ष्य के आधार पर पता लगाने के लिए न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को चौदह दिन का समय दिया जाता है। कॉर्पोरेट देनदार की ओर से चूक मौजूद है या नहीं। यह अभ्यास, उपधारा (5) के अनुसार, निर्णय प्राधिकारी द्वारा चौदह दिनों के भीतर पूरा किया जाना है। उपधारा (5) ऐसे आवेदन से निपटने के दौरान निर्णायक प्राधिकारी को दो विकल्प प्रदान करती है: यदि वह संतुष्ट है कि धारा 9(5) के खंड (1) में उल्लिखित शर्तें संतुष्ट हैं, निर्णायक प्राधिकारी ऐसे आवेदन को स्वीकार करने का आदेश पारित कर सकता है। दूसरी ओर, यदि निर्णायक प्राधिकारी को उप-धारा (2) में बताई गई किसी भी घटना का अस्तित्व पता चलता है, तो वह ऐसे आवेदन को अस्वीकार करने का आदेश दे सकता है।

5. जिन शर्तों से हम चिंतित हैं उनमें से एक यह है कि उप-धारा (2) के तहत आवेदन सभी प्रकार से पूरा होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को संतुष्ट होना होगा कि यह दोषपूर्ण नहीं है। यदि निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को आवेदन की जांच के बाद पता चलता है कि उसमें कुछ खामियां हैं और यह उप-धारा (2) के प्रावधानों के अनुसार पूर्ण नहीं है, उस स्थिति में, उप-सी धारा (5) के प्रावधान में कहा गया है कि आवेदन को खारिज करने से पहले, निर्णायक प्राधिकारी को नोटिस प्राप्त

होने के सात दिनों के भीतर आवेदक को अपने आवेदन में दोष को ठीक करने के लिए एक नोटिस देना होगा।

6. इस प्रकार, धारा 9 की उपधारा (5) दो समय अवधि निर्धारित करती है। जहां तक निर्णायक प्राधिकारी का सवाल है, उसे चौदह दिनों की अवधि के भीतर आवेदन को स्वीकार करने या अस्वीकार करने का निर्णय लेना होगा। जहां तक आवेदन में दोषों का सवाल है, निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को उस आधार पर आवेदन खारिज करने से पहले आवेदक को दोषों को सुधारने के लिए एक नोटिस देना होता है और दोषों को दूर करने के लिए आवेदक को सात दिन की अवधि दी जाती है।

7. एनसीएलएटी के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या डिफ़ॉल्ट के अस्तित्व का पता लगाने और आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करने के लिए निर्णायक प्राधिकारी को दिया गया चौदह दिनों का समय अनिवार्य या निर्देशिका है। आगे का प्रश्न (जिससे यह न्यायालय चिंतित है) यह था कि क्या दोषों को सुधारने के लिए सात दिनों की अवधि अनिवार्य है या निर्देशिका।

8. एनसीएलएटी ने माना है कि निर्णायक प्राधिकारी के लिए इस तरह का आदेश पारित करने के लिए निर्धारित चौदह दिनों की अवधि निर्देशिका प्रकृति की है, जबकि आवेदक परिचालन ऋणदाता को दोषों को सुधारने के लिए दी गई सात दिनों की अवधि प्रकृति में अनिवार्य है। इस संबंध में निष्कर्ष आक्षेपित आदेश के पैराग्राफ 43 और 4 में बताया गया है और ये पैराग्राफ इस प्रकार हैं:

> "43. इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून की उपरोक्त स्पष्ट स्थिति और ऊपर की गई चर्चा के मद्देनजर, हमारा मानना है कि धारा 7 की उपधारा (5) या धारा 9 की उपधारा (5) या धारा 10 की

उपधारा (4) का अधिदेश प्रकृति में प्रक्रियात्मक है, शीघ्र न्याय दिलाने में सहायता का एक उपकरण और निर्देशिका है।

44. हालाँकि, जैसा कि ऊपर देखा गया है, प्रासंगिक प्रावधानों के प्रावधान के तहत निर्धारित दोषों के सुधार के लिए 7 दिनों की अवधि का अनुपालन कॉर्पोरेट देनदार द्वारा किया जाना आवश्यक है, जिसका आवेदन, अन्यथा, अधूरा होने के कारण अस्वीकार किए जाने योग्य है। इस पृष्ठभूमि में, हमारा मानना है कि धारा 7 की उप-धारा (5) का प्रावधान या धारा 9 की उप-धारा (5) का प्रावधान या धारा 10 की उप-धारा (4) का प्रावधान 7 दिनों के भीतर दोष को दूर करना अनिवार्य है, और विफलता पर आवेदन अस्वीकार किये जाने योग्य हैं।"

उपरोक्त निष्कर्षों के आधार पर, एनसीएलएटी ने परिचालन ऋणदाता द्वारा दायर आवेदन को निम्नलिखित तरीके से खारिज करने का निर्देश दिया:

"51. इसके अलावा, हमने पाया कि आवेदन दोषपूर्ण था, और उक्त कारण से आवेदन निर्दिष्ट समय के भीतर स्वीकार नहीं किया गया था। भले ही यह माना जाए कि परिचालन ऋणदाता को 7 अतिरिक्त दिनों का समय दिया जाना था, 16 फरवरी 2017 को बताई गई कमियों और समय के भीतर ध्यान नहीं दिए जाने के कारण, हम मानते हैं कि प्रतिवादी/परिचालन ऋणदाता द्वारा धारा 9 के तहत दायर याचिका अधूरी होने के कारण खारिज करने योग्य थी।

52. उपरोक्त कारणों से, हम निर्णायक प्राधिकारी को उत्तरदाताओं द्वारा पसंद की गई याचिका को अस्वीकार करने और बंद करने का निर्देश देते हैं। हमारे द्वारा निर्णय सुरक्षित रखने के बाद यदि निर्णायक प्राधिकारी द्वारा बर्खास्तगी के आदेश को छोड़कर कोई भी आदेश पारित किया गया है, तो उसे भी अवैध घोषित किया जाता है।"

9. इससे पहले कि हम यह कहें कि एनसीएलएटी द्वारा उपरोक्त प्रतिपादन उचित है या नहीं, कुछ आवश्यक तथ्यों का जायजा लेना उचित होगा।

10. संहिता के अधिनियमन से पहले, ऐसे विषय मामलों से निपटने वाला प्रासंगिक कानून बीमार औद्योगिक कंपनी विशेष प्रावधान) अधिनियम, 1985 (इसके बाद 'एसआईसीए' के रूप में संदर्भित) था। इस अधिनियम के तहत, एक औद्योगिक उपक्रम, बीमार होने पर (अर्थात जहां उसकी निवल संपत्ति नष्ट हो गई), SICA की धारा 15(1) के तहत एक संदर्भ दायर कर सकता है; SICA के अंतर्गत गठित औद्योगिक और वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (संक्षेप में, 'BIFR') के समक्ष। बीआईएफआर को इस तरह के संदर्भ को स्वीकार करने पर यह विचार करना था कि ऐसी बीमार कंपनी को पुनर्जीवित किया जा सकता है या नहीं। इस उद्देश्य के लिए, बीआईएफआर एक ऑपरेटिंग एजेंसी (ओए) नियुक्त करेगा जिसे अन्य हितधारकों, विशेष रूप से ऋणदाताओं के परामर्श से पुनरुद्धार योजना की संभावना तलाशनी होगी। यदि ओए द्वारा तैयार की गई ऐसी पुनर्निर्माण/पुनरुद्धार योजना बीआईएफआर द्वारा व्यवहार्य पाई गई थी; संबंधित पक्षों के विचारों/आपत्तियों का पता लगाने के बाद, बीआईएफआर ऐसी योजना को मंजूरी देगा। यदि यह संभव नहीं होता, तो बीआईएफआर क्षेत्राधिकार वाले उच्च न्यायालय को इस संबंध में संदर्भ देकर बीमार कंपनी को बंद करने की सिफारिश करेगा। औद्योगिक और वित्तीय पुनर्निर्माण अपीलीय प्राधिकरण (एएआईएफआर) के समक्ष अपील का प्रावधान था। इस योजना को मामले की स्पष्टता के उद्देश्य से संक्षेप में बताया गया है, हालांकि हम SICA के किसी भी प्रावधान से चिंतित नहीं हैं। एक अन्य पहलू जिसका उल्लेख करने की आवश्यकता है वह यह है कि संदर्भ को स्वीकार करने पर, उक्त बीमार औद्योगिक कंपनी के खिलाफ लेनदारों या अन्य व्यक्तियों द्वारा शुरू की गई अन्य सभी कानूनी कार्यवाही को एसआईसीए की धारा 22 (1) के तहत दी गई सुरक्षा के आधार पर रोक दिया जाना था।

11. यहां प्रतिवादी नंबर 1, अर्थात्, जुग्गीलाल कमलापत जूट मिल्स कंपनी लिमिटेड, वर्ष 1994 में एक बीमार औद्योगिक कंपनी बन गई और इस कारण से उसने SICA की धारा 15(1) के तहत अपना संदर्भ दायर किया। इसे 16 दिसंबर, 1994 को बीआईएफआर द्वारा एक बीमार औद्योगिक कंपनी घोषित किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप यह एसआईसीए की धारा 22(1) की सुरक्षात्मक छत्रछाया में आ गई। अपीलकर्ता के अनुसार (जो इस मामले में परिचालन ऋणदाता है), जो एक जूट व्यापारी है, इसने वर्ष 2001, 2002 और 2003 में प्रतिवादी नंबर 1 (कॉर्पोरेट देनदार) को कच्चे जूट की आपूर्ति की थी, जिसके संबंध में कॉरपोरेट देनदार के पास 17,06,766.95 रुपये की राशि थी। इसके अलावा, परिचालन ऋणदाता के अनुसार, कॉर्पोरेट देनदार ने उपरोक्त ऋण को स्वीकार करते हुए 24 अक्टूबर 2004 को प्रमाणपत्र जारी किया था। हालाँकि, कार्यवाही लंबित होने के कारण यह इस ऋण की वसूली करने की स्थिति में नहीं थी, जिसके परिणामस्वरूप SICA की धारा 22(1) के मद्देनजर कार्यवाही रोक दी गई। वर्ष 2007 में, कोटा स्थित एक कंपनी, जिसे रेनी पार्क सप्लायर्स प्राइवेट लिमिटेड (इसके बाद 'रेनी पार्क' के रूप में जाना जाता है) के नाम से जाना जाता है, ने कॉर्पोरेट देनदार में निवेश किया और अपने पूर्व प्रमोटरों, यानी जे.के. सिंघानिया ग्रुप से इसका प्रबंधन अपने हाथ में ले लिया। परिचालन ऋणदाता ने रेनी पार्क को उपरोक्त राशि का भुगतान करने के लिए नोटिस भेजा था। लेकिन, इसका भुगतान नहीं किया गया. इस संबंध में कानूनी नोटिस भी भेजे गए और बीआईएफआर के समक्ष आवेदन भी दायर किए गए। इसमें विभिन्न घटनाओं का उल्लेख किया गया है जिनका संक्षिप्तता के कारण उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। तथ्य यह है कि कॉर्पोरेट देनदार या रेनी पार्क द्वारा उपरोक्त ऋण का भुगतान या परिसमापन नहीं किया गया था। जबकि मामला बीआईएफआर के पास लंबित था, 28 मई, 2016 से संहिता के अधिनियमन पर बीमार औद्योगिक कंपनी निरसन अधिनियम पारित किया गया था। परिणामस्वरूप, बीआईएफआर और एएआईएफआर के समक्ष

सभी कार्यवाही समाप्त हो गई। इस प्रतिबंध के साथ, SICA की धारा 22(1) भी गायब हो गई।

12. इन बदली हुई परिस्थितियों में, परिचालन ऋणदाता ने कॉर्पोरेट देनदार को बकाया राशि का भुगतान करने के लिए कॉल करने पर संहिता के तहत निर्धारित वैधानिक प्रारूप में 06 जनवरी, 2017 को एक और मांग नोटिस भेजा। चूंकि इसका भुगतान नहीं किया गया था, परिचालन ऋणदाता ने अधिनियम की धारा 9 के तहत कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू करने के लिए आवेदन दायर किया। उक्त आवेदन दाखिल करने की तारीख से लेकर एनसीएलएटी द्वारा विवादित आदेश पारित होने तक घटी घटनाओं का कालक्रम नीचे दिया गया है:

10.02.2017 अपीलकर्ता ने संहिता की धारा 9(2) के तहत, सीपी नंबर 10/एएलडी/2017 के तहत, संहिता के तहत निर्णायक प्राधिकारी के समक्ष आवेदन दायर किया।

14.02.2017 निर्णायक प्राधिकारी की रजिस्ट्री ने आदेश संख्या, 25/2/2016-एनसीएलटी दिनांक 28.07.20)6 के अनुसार याचिका/आवेदन/अपील/उत्तर की जांच के लिए तैयार की गई चेक सूची के आधार पर कुछ प्रक्रियात्मक दोषों को इंगित किया। 16.02.2017 को निर्णय प्राधिकारी के समक्ष सुनवाई के लिए आवेदन सूचीबद्ध किया गया।

16.02.2017 निर्णय प्राधिकारी ने अपीलकर्ता को 28.02.2017 को उक्त प्रक्रियात्मक दोषों को दूर करने के लिए समय दिया और बीआईएफआर के समक्ष कार्यवाही के चरण के बारे में भी जानना चाहा जब कार्यवाही समाप्त हो गई।

28.02.2017 अपीलकर्ता ने प्रक्रियात्मक दोष दूर कर दिये। जैसा कि निर्णायक प्राधिकारी ने पूछताछ की, अपीलकर्ता के वकील ने संहिता लागू होने से पहले बीआईएफआर द्वारा पारित नवीनतम आदेश प्रदान करके औपचारिक ज्ञापन दाखिल करने के लिए कुछ और समय मांगा।

03.03.2017 अपीलकर्ता ने लंबित बीआईएफआर की कार्यवाही से उत्पन्न होने वाले अपने औपचारिक ज्ञापन/अतिरिक्त दस्तावेज/आदेश दायर किए जो निरस्त हो गए। 03.03.2017 को, प्रतिवादी नंबर 1 देनदार न्यायनिर्णयन प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ और आवेदन की रखरखाव योग्यता पर अपनी आपत्तियां उठाने की स्वतंत्रता मांगी।

09.03.2017 कॉर्पोरेट देनदार/प्रतिवादी नंबर 1 कंपनी ने समय-बाधित ऋण जैसे विभिन्न आधारों पर दायर आवेदन की स्थिरता पर विवाद करते हुए निर्णायक प्राधिकरण के समक्ष अपनी लिखित आपत्तियां दर्ज कीं; दोषपूर्ण मांग नोटिस; जिला न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता के खिलाफ दायर सिविल सूट संख्या 225/2017 और आईबी कोड, 2016 की धारा 252 द्वारा बनाए गए प्रतिबंध के तहत एसआईसीए की समाप्ति के बाद छह महीने की अवधि के लिए कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती है। एक जेके जूट मिल मजदूर मोर्चा,कानपुर यानी प्रतिवादी नंबर 2 ने मामले में हस्तक्षेप की मांग करते हुए एक आवेदन दायर किया और घनश्याम सारदा बनाम शिव शंकर ट्रेडिंग कंपनी और अन्य के मामले (2015) 1एससीसी298 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक

13.11.2014 के फैसले सहित विभिन्न आदेशों को रिकॉर्ड में लाया, जिसमें इस न्यायालय ने पाया है कि बीआईएफआर की अनुमति के बिना संपत्ति की बिक्री बीआईएफआर के समक्ष संदिग्ध है और साथ ही इस न्यायालय द्वारा 18.11.2016 को घनश्याम सारदा बनाम ससलीकांत झा (यानी अवमानना याचिका (सिविल 338/2014) के मामले में एक आदेश पारित किया गया था, जिसमें कॉर्पोरेट देनदार के निदेशक यानी प्रतिवादी नंबर 1 को अवमानना का दोषी ठहराया गया है। यह भी कहा गया है कि कॉर्पोरेट देनदार यानी प्रतिवादी नंबर 1 जूट मिल के श्रमिकों के वैध बकाया का भुगतान करने में भी विफल रहा, जिसकी कीमत रुपये में 100 करोड़ से अधिक है।

09.03.2017 उपरोक्त परिदृश्य के आलोक में, पर्याप्त न्याय प्रदान करने के लिए निर्णायक प्राधिकरण ने अन्य बातों के साथ-साथ प्रतिवादी नंबर 1/कॉर्पोरेट देनदार को अगले आदेश तक अपनी अचल संपत्ति के संबंध में यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया।

21.03.2017 निर्णय प्राधिकारी, इलाहाबाद पीठ द्वारा 09.03.2017 को पारित अंतरिम आदेश को प्रतिवादी संख्या 1/कॉर्पोरेट देनदार द्वारा आईबी कोड, 2016 की धारा 61 के तहत राष्ट्रीय कंपनी कानून के समक्ष चुनौती दी गई थी। अपीलीय न्यायाधिकरण (एनसीएलएटी) कंपनी अपील संख्या 9/2017 है। एनसीएलएटी ने 21.03.2017 को उक्त अपील में नोटिस जारी किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा गया कि इस मामले में कानून का प्रश्न शामिल है और निर्णायक प्राधिकारी को

अपीलकर्ता द्वारा आईबी कोड, 2016 के तहत दायर आवेदन को स्वीकार नहीं करने का निर्देश दिया।

01.05.2017 एनसीएलएटी ने एटी नंबर 09/2017 को इस आधार पर खारिज करने की अनुमति दी है कि अपीलकर्ता द्वारा दायर आवेदन और धारा 9 याचिका अधूरी, दोषपूर्ण और उपयुक्त थी। इसलिए, एनसीएलएटी ने एनसीएलटी को अन्य बातों के साथ-साथ लागू आदेश में पारित 1बी कोड, 2016 की धारा 9 के तहत अपीलकर्ता द्वारा दायर आवेदन को खारिज करने और बंद करने का निर्देश देने में प्रसन्नता व्यक्त की। अपीलकर्ता द्वारा आईबी कोड, 2016 की धारा 9 के तहत दायर आवेदन को आईबी (न्यायनिर्णयन प्राधिकारी के लिए आवेदन) नियम, 2016 के साथ सीपी नंबर (आईबी) एलओ/एएलडी/ 2017 के साथ पढ़ा जाता है।

13. हम प्रारंभ में ही बता सकते हैं कि अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया था कि वर्तमान मामले में जो दोष बताए गए थे वे संहिता में उल्लिखित प्रकृति के नहीं थे, बल्कि कंपनी अधिनियम, 2013 के संदर्भ में थे। इस उद्देश्य के लिए, उन्होंने दिवाला और दिवालियापन (एफ 1-1 न्यायनिर्णयन प्राधिकरण पर लागू) नियम, 2016 (इसके बाद 'नियम 2016' के रूप में संदर्भित) का उल्लेख किया था और उस आधार पर यह तर्क दिया गया कि संहिता की धारा 9(5) तत्काल मामले में लागू नहीं होती क्योंकि 'त्रुटिपूर्ण' आवेदन और 'अपूर्ण' आवेदन के बीच अंतर होना जरूरी है। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी एसआईसीए के तहत लंबित कार्यवाही में बीआईएफआर द्वारा पारित अंतरिम आदेशों का उल्लंघन कर रहा था। हालाँकि, हम शुरू में ही यह स्पष्ट कर देते हैं कि चूंकि हम इस महत्वपूर्ण

मुद्दे से निपट रहे हैं कि क्या दोषों को दूर करने के लिए सात दिनों की अवधि अनिवार्य है या नहीं, इसलिए इन सांसारिक पहलुओं पर चर्चा करना आवश्यक नहीं है। इसके बजाय, मामले के सार पर ध्यान केंद्रित करना बेहतर होगा।

14. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, जहां तक चौदह दिनों के नुस्खे का सवाल है, जिसके भीतर निर्णायक प्राधिकारी को आवेदन स्वीकार करने या अस्वीकार करने के लिए धारा 9 की उपधारा (5) के तहत एक आदेश पारित करना होता है, एनसीएलएटी ने माना है कि इसे मैंडेटड्राई के रूप में नहीं माना जा सकता। यद्यपि यह दृष्टिकोण चुनौती के अधीन नहीं है (और यह सही भी है), इस पहलू पर आक्षेपित आदेश में चर्चा से दूसरे प्रश्न पर निश्चित प्रभाव पड़ता है, जिससे यह न्यायालय चिंतित है। इसलिए, हम उस तर्क पर चर्चा करना उचित समझते हैं जो एनसीएलएटी 1 द्वारा स्वयं उपरोक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए प्रदान किया गया है, जहां तक पहले पहलू का संबंध है।

15. एनसीएलएटी द्वारा यह बताया गया है कि जहां किसी आवेदन का निपटारा कोड में निर्दिष्ट अवधि के भीतर नहीं किया जाता है या कोई आदेश पारित नहीं किया जाता है, ऐसे मामलों में निर्णय लेने वाला प्राधिकारी निर्दिष्ट अवधि के भीतर ऐसा नहीं करने के कारणों को दर्ज कर सकता है। और समय बढ़ाने के लिए एनसीएलएटी के अध्यक्ष से अनुरोध कर सकता है, जो दर्ज किए गए कारणों को ध्यान में रखते हुए, कोड में निर्दिष्ट अवधि बढ़ा सकता है, लेकिन दस दिनों से अधिक नहीं, जैसा कि कोकल की धारा 64 (1) में प्रदान किया गया है। . इसके बाद एनसीएलएटी ने दिवाला समाधान प्रक्रिया के विभिन्न चरणों और उनके लिए निर्धारित समय सीमा को इंगित करके संहिता की योजना की जांच की है। यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया संहिता की धारा 7 के तहत वित्तीय ऋणदाता द्वारा, संहिता की धारा 9 के तहत परिचालन ऋणदाता द्वारा और संहिता की धारा 10 के

तहत कॉर्पोरेट आवेदक द्वारा शुरू की जा सकती है। जहां तक संबंधित प्रावधानों के तहत दायर आवेदनों को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के मानदंड का संबंध है, इन प्रावधानों में थोड़ा अंतर है। हालाँकि, यह ध्यान रखना उचित है कि दिवाला समाधान प्रक्रिया के स्वीकार होने के बाद, इन आवेदनों से निपटने की प्रक्रिया, चाहे वित्तीय ऋणदाता या परिचालन ऋणदाता या कॉर्पोरेट आवेदक द्वारा दायर की गई हो, वही है। इस प्रक्रिया पर नज़र डालना प्रासंगिक होगा।

16. आवेदन स्वीकार होने पर, निर्णायक प्राधिकारी को संहिता की धारा 16(1) के अनुसार एक अंतरिम समाधान पेशेवर (संक्षेप में, 'आईआरपी') नियुक्त करना आवश्यक है। यह प्रक्रिया न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा दिवालियापन की तारीख शुरू होने के चौदह दिनों के भीतर की जानी है। यह प्रारंभ तिथि आवेदन स्वीकार करने की तिथि से मानी जाएगी। धारा 16 की उपधारा (5) के तहत आईआरपी की अवधि तीस दिन से अधिक नहीं हो सकती। आरपी द्वारा किए जाने वाले कुछ कार्यों का उल्लेख संहिता के बाद के प्रावधानों में किया गया है, जिसमें आईआरपी द्वारा कॉर्पोरेट देनदार के मामलों के प्रबंधन के साथ-साथ नियुक्त आईआरपी के कर्तव्य भी शामिल हैं। आईआरपी का एक महत्वपूर्ण कार्य कॉर्पोरेट देनदार के खिलाफ सभी दावों को आमंत्रित करना, उन सभी दावों का मिलान करना और कॉर्पोरेट देनदार की वित्तीय स्थिति का निर्धारण करना है। ऐसा करने के बाद, आईआरपी को लेनदारों की एक समिति का गठन करना होगा जिसमें कॉर्पोरेट देनदार के वित्तीय लेनदार शामिल होंगे। लेनदारों की ऐसी समिति की पहली बैठक उक्त समिति के गठन के सात दिनों के भीतर होनी है, जैसा कि संहिता की धारा 22 में दिया गया है। उक्त पहली बैठक में, लेनदारों की समिति को या तो आईआरपी को रिज़ॉल्यूशन प्रोफेशनल (आरपी) के रूप में नियुक्त करने या आईआरपी के स्थान पर किसी अन्य आईआरपी को नियुक्त करने का निर्णय लेना होगा। चूंकि आईआरपी की अवधि तीस दिन है, इसलिए उपरोक्त सभी कदम इस तीस दिन की अवधि के भीतर पूरे किए जाने हैं। इसके बाद, जब आरपी की नियुक्ति

की जाती है, तो उसे उक्त अवधि के दौरान संपूर्ण कॉर्पोरेट दिवाला समाधान, प्रक्रिया और कॉर्पोरेट देनदार के संचालन का प्रबंधन करना होता है। इस संबंध में आरपी द्वारा उठाए जाने वाले आगे के कदमों के बारे में बताना आवश्यक नहीं है। महत्वपूर्ण बात यह है कि संपूर्ण कॉर्पोरेट दिवाला समाधान प्रक्रिया आवेदक के प्रवेश की तारीख से 180 दिनों की अवधि के भीतर पूरी की जानी है। यह समय सीमा अधिनियम की धारा 12 में प्रदान की गई है। इस अवधि को 9f 180 दिनों तक बढ़ाया जा सकता है, लेकिन इस तरह के विस्तार की सीमा निर्धारित है क्योंकि विस्तार 90 दिनों से अधिक नहीं हो सकता है। यहां तक कि इस तरह का विस्तार भी निर्णायक प्राधिकारी द्वारा इस संतुष्टि को दर्ज करने के बाद ही दिया जाएगा कि कॉर्पोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया 180 दिनों की मूल निर्धारित अवधि के भीतर पूरी नहीं की जा सकती है। यदि उपरोक्त समय सीमा के भीतर समाधान प्रक्रिया पूरी नहीं होती है, तो संहिता की धारा 33 के तहत इसके गंभीर परिणाम का प्रावधान है। उस प्रावधान के अनुसार, ऐसी स्थिति में, निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को एक आदेश पारित करने की आवश्यकता होती है, जिसमें कॉर्पोरेट देनदार को उक्त अध्याय में बताए गए तरीके से परिसमापन करने की आवश्यकता होती है।

17. समय सीमा निर्धारित करने वाली उपरोक्त वैधानिक योजना एक स्पष्ट संदेश भेजती है, जैसा कि एनसीएलएटी ने भी सही माना है कि समय संहिता का सार है। संहिता के पीछे इस हितकारी विषय और भावना के बावजूद, एनसीएलएटी ने निष्कर्ष निकाला है कि जहां तक दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू करने के लिए आवेदन को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के लिए निर्णायक प्राधिकारी को प्रदान किए गए चौदह दिनों के समय का सवाल है, यह अवधि अनिवार्य नहीं है। इस तरह के निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, एनसीएलएटी ने कुछ निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर चर्चा की है। इसलिए, हम इस संबंध में एनसीएलएटी की चर्चा को ही पुन: प्रस्तुत करना उचित समझते हैं:

"32. पी.टी. राजन बनाम टी.पी.एम. साहिर और अन्य (2003) 8 एससीसी 498 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि जहां निर्णायक प्राधिकारी को निर्धारित समय अवधि के भीतर किसी आवेदन को स्वीकार करने या अस्वीकार करने जैसा वैधानिक कार्य करना होता है, तो समय अवधि को निर्देशिका के रूप में माना जाएगा और अनिवार्य नहीं होगा। उक्त मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा:

"48. यह कानून का सुस्थापित सिद्धांत है कि जहां एक वैधानिक पदाधिकारी को उसके लिए निर्धारित समय के भीतर वैधानिक कर्तव्य पूरा करने के लिए कहा जाता है, वह निर्देशिका होगी और अनिवार्य नहीं होगी। (देखें शिवेश्वर प्रसाद सिन्हा बनाम मोंघुर के जिला मजिस्ट्रेट और अन्य एआईआर (1966) पटना 144, नोमिता चौधरी बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य (1999) सीएलजे 21 और गरबरी यूनियन को-ऑपरेटिव एग्रीकल्चरल क्रेडिट सोसाइटी लिमिटेड और अन्य: वी. स्वपन कुमार जाना एवं अन्य (1997) 1 सीएचएन 189)।

49. इसके अलावा, किसी क़ानून में एक प्रावधान जो प्रकृति में प्रक्रियात्मक है, हालांकि "करेगा" शब्द का उपयोग करता है, उसे अनिवार्य नहीं माना जा सकता है यदि इससे कोई पूर्वाग्रह नहीं होता है।

33. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई अवसरों पर 'करेगा' शब्द की व्याख्या 'हो सकता है' के रूप में की है। किसी मुकदमे में प्रतिवादियों द्वारा लिखित बयान दाखिल करने के लिए निर्धारित समय के संदर्भ में एक समान स्थिति पाई जा सकती है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय को नागरिक प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश VII नियम 1 के तहत निर्धारित 90 दिनों की अवधि के बाद दायर किए गए लिखित बयानों को रिकॉर्ड पर लेने की अदालत की शक्ति के सवाल का सामना करना पड़ा था।

इस संबंध में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कैलाश बनाम नन्हकू और अन्य (2005) 4 धारा 480 में निम्नानुसार व्यवस्था दी:

> "27. तीन बातें स्पष्ट हैं। सबसे पहले, जिस भाषा में आदेश 8 नियम 1 का मसौदा तैयार किया गया है उसे ध्यान से पढ़ने से पता चलता है कि यह प्रतिवादी पर सर्मनोन की सेवा की तारीख से 30 दिनों के भीतर और 90 दिनों के भीतर आने वाले विस्तारित समय के भीतर लिखित बयान दाखिल करने का दायित्व डालता है। प्रावधान अदालत की शक्ति से संबंधित नहीं है और विशेष रूप से लिखित बयान को रिकॉर्ड पर लेने की अदालत की शक्ति को भी नहीं छीनता है, भले ही समय से परे दायर किया गया हो, जैसा कि प्रदान किया गया है। दूसरे, आदेश 8 नियम 1 में निहित प्रावधान की प्रकृति प्रक्रियात्मक है। यह मूल कानून का हिस्सा नहीं है. तीसरा, आदेश 8 नियम 1 को वर्तमान स्वरूप में प्रतिस्थापित करने के पीछे का उद्देश्य बेईमान प्रतिवादियों द्वारा टाल-मटोल की रणनीति अपनाने, मामलों के निपटान में देरी करने, जिससे वादी को निराशा होती है, की शरारतों पर अंकुश लगाना है। याचिकाकर्ता त्वरित राहत के लिए अदालत का रुख कर रहे हैं और साथ ही अदालत को स्थगन के लिए बार-बार प्रार्थना करने से गंभीर असुविधा का सामना करना पड़ रहा है। इसका उद्देश्य सुनवाई में तेजी लाना है न कि इसमें बाधा डालना। न्याय की प्रक्रिया को तेज़ और जल्दबाजी किया जा सकता है लेकिन निष्पक्षता जो न्याय का मूल तत्व है उसे दफनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।"

34. इसके अलावा, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने श्रीमती रानी कुसुम बनाम श्रीमती कंचन देवी (2005) 6 एससीसी 705 के मामले में काई/ऐश बनाम एनएफएलसी/आईकू (सुप्रा) में निर्धारित अनुपात से सहमति जताते हुए कहा कि:

"10: प्रक्रिया के सभी नियम न्याय की दासी हैं। प्रक्रियात्मक कानून के ड्राफ्ट्समैन द्वारा प्रयुक्त भाषा उदार या कठोर हो सकती है, लेकिन तथ्य यह है कि प्रक्रिया निर्धारित करने का उद्देश्य न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाना है, एक प्रतिकूल व्यवस्था में, किसी भी पक्ष को न्याय वितरण की प्रक्रिया में भाग लेने के अवसर से आम तौर पर वंचित नहीं किया जाना चाहिए। जब तक क़ानून की स्पष्ट और विशिष्ट भाषा द्वारा मजबूर न किया जाए, सीपीसी या किसी अन्य प्रक्रियात्मक अधिनियम के प्रावधानों को इस तरह से नहीं समझा जाना चाहिए जो न्याय के अंत में असाधारण स्थितियों का सामना करने के लिए अदालत को असहाय बना दे।

11. कानून के हाथों न्याय की नश्वरता न्यायाधीश की अंतरात्मा को परेशान करती है और कानून सुधारक पर क्रोधपूर्ण सवाल उठाती है।

12. प्रक्रियात्मक कानून कुछ प्रणालियों पर इतना हावी है कि वह मूल अधिकारों और पर्याप्त न्याय पर हावी हो जाता है। मानवतावादी नियम यह है कि प्रक्रिया कानूनी न्याय की दासी होनी चाहिए, न कि 'मालकिन', न्यायाधीशों को पूर्व डेबिटो जस्टिसिया के रूप में कार्य करने के लिए एक अवशिष्ट शक्ति प्रदान करने पर विचार करने के लिए मजबूर करती है, जहां अन्यथा दुखद परिणाम पूरी तरह से असमान होगा। न्याय न्यायशास्त्र का लक्ष्य है, प्रक्रियात्मक, साथ ही वास्तविक भी। (देखें सुशी! कुमार सेन बनाम बिहार राज्य [(1975) आई एससीसी 774])

13. किसी भी व्यक्ति को किसी भी प्रक्रिया में निहित अधिकार नहीं है। उसके पास केवल उसी प्रकार से अभियोजन या बचाव का अधिकार है,

जिस अदालत में मामला लंबित है। यदि, संसद के किसी अधिनियम द्वारा प्रक्रिया का तरीका बदल दिया जाता है, तो उसके पास बदले हुए तरीके के अनुसार आगे बढ़ने के अलावा कोई अन्य अधिकार नहीं है। (ब्लिथ बनाम ब्लिथ देखें [(1966) आई ऑल ईआर 524: 1966 एसी 643: (1966) 2 डब्लूएलआर 634 (एचएल)]।) एक प्रक्रियात्मक कानून को आमतौर पर अनिवार्य नहीं माना जाना चाहिए; प्रक्रियात्मक कानून हमेशा न्याय के अधीन होता है और न्याय में सहायता करता है। ऐसी कोई भी व्याख्या जो न्याय प्राप्तकर्ता को भ्रमित करती हो या निराश करती हो, उसका पालन नहीं किया जाना चाहिए। (श्रीनाथ बनाम राजेश देखें [(1998) 4 एससीसी 543: एआईआर 1998 एससी 1827]।)

14. प्रक्रियात्मक कानून अत्याचारी नहीं बल्कि सेवक बनना है, बाधा नहीं बल्कि न्याय में सहायता करना है। प्रक्रियात्मक नुस्खे दासी हैं, स्वामिनी नहीं, स्नेहक हैं, न्याय प्रशासन में प्रतिरोधी नहीं।"

xx xx xx

41. इसके अलावा, 'संहिता' की धारा 7 की उपधारा (5) या धारा 9 की उपधारा (5) और धारा 10 की उपधारा (4) में निहित प्रावधानों की प्रकृति आदेश VIII नियम 1 की तरह प्रक्रियात्मक प्रकृति का होने के कारण इसे कानून का आदेश नहीं माना जा सकता है।

42. धारा 7 की उपधारा (5), धारा 9 की उपधारा (5) तथा धारा 10 की उपधारा (4) के अंतर्गत निर्धारित समयावधि के पीछे का उद्देश्य, आदेश VIII की तरह, CPC का नियम 1 मामलों के निपटारे की सुनवाई में देरी को रोकने के लिए है। निर्णायक प्राधिकारी प्रावधानों की

अनदेखी नहीं कर सकते। लेकिन उपयुक्त मामलों में, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से, यह धारा 7 या धारा 9 या धारा 10 के तहत निर्धारित अवधि के बाद याचिका को स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है।

43. इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून की उपरोक्त स्पष्ट स्थिति और ऊपर की गई चर्चा के मद्देनजर, हम मानते हैं कि धारा 7 की उपधारा (5) या धारा 9 की उपधारा (5) या धारा 10 की उपधारा (4) का अधिदेश प्रकृति में प्रक्रियात्मक है, न्याय के शीघ्र वितरण में सहायता का एक उपकरण है और निर्देशिका है।"

18. एनसीएलएटी ने यह भी माना है कि चौदह दिनों की अवधि की गणना 'आवेदन प्राप्त होने की तारीख से' की जानी चाहिए। एनसीएलएटी ने स्पष्ट किया है कि आवेदन प्राप्त होने की तारीख को आवेदन दाखिल करने की तारीख नहीं माना जा सकता है। चूंकि रजिस्ट्री को यह पता लगाना आवश्यक है कि क्या आवेदन उचित रूप में है और निर्धारित शुल्क के साथ है, इसलिए आवेदन की जांच करने में कुछ समय लगेगा और, इसलिए, उपरोक्त प्रावधानों के तहत निर्णायक प्राधिकारी को दी गई चौदह दिन की अवधि उस तारीख से होगी जब ऐसा आवेदन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है, अर्थात वह तारीख जिस दिन इसे प्रवेश/आदेश के लिए सूचीबद्ध किया जाता है।

19. चौदह दिनों के समय के प्रावधान का विश्लेषण करने के बाद, जिसके भीतर निर्णायक प्राधिकारी को आदेश पारित करना है, एनसीएलएटी तुरंत दूसरे निष्कर्ष पर पहुंचा, अर्थात। दोष दूर करने के लिए धारा 9 की उपधारा (5) के परन्तुक में उल्लिखित सात दिन की अवधि निम्नलिखित चर्चा के साथ अनिवार्य है:

"44. हालाँकि, जैसा कि ऊपर बताया गया है, प्रासंगिक प्रावधानों के प्रावधानों के तहत निर्धारित दोषों के सुधार के लिए 7 दिनों की अवधि का अनुपालन कॉर्पोरेट देनदार द्वारा किया जाना आवश्यक है, जिसका आवेदन; अन्यथा, अपूर्ण होने के कारण अस्वीकार किया जा सकता है, इस पृष्ठभूमि में, हमारा मानना है कि धारा 7 की उप-धारा (5) का प्रावधान या धारा 9 की उप-धारा (5) का प्रावधान या धारा 10 की उप-धारा (4) का प्रावधान 7 दिनों के भीतर दोष को दूर करना अनिवार्य है, और विफलता पर आवेदन अस्वीकार किये जाने योग्य हैं:"

इस पहलू पर आगे कोई चर्चा नहीं है.

20. हम इस निष्कर्ष पर पहुंचने के दौरान दिए गए किसी भी वैध कारण को समझने में सक्षम नहीं हैं कि परंतुक में उल्लिखित अवधि अनिवार्य है। इसके बाद, एनसीएलएटी का आदेश संहिता की धारा 12 के प्रावधानों पर ध्यान देता है और बताता है कि दिवाला समाधान प्रक्रिया को पूरा करने की समय सीमा 180 दिन है, जिसे 90 दिनों तक बढ़ाया जा सकता है। हालाँकि, यह धारा 9 की उपधारा (5) के परंतुक के प्रावधानों को जिस तरीके से किया गया है, उसका अर्थ लगाने का कोई औचित्य प्रदान नहीं कर सकता है। यह ध्यान में रखना होगा कि धारा 12 में उल्लिखित 180 दिनों की सीमा भी आवेदन स्वीकार करने की तारीख से शुरू होती है। उससे पहले की अवधि, धारा 9 के तहत आवेदन दाखिल करने के बाद (या धारा 7 या धारा 10 के तहत उस मामले के लिए) समाप्त हो जाती है। चाहे आवेदन की जांच करने में निर्णायक प्राधिकारी की रजिस्ट्री द्वारा या दोषों को दूर करने में आवेदक द्वारा या आवेदन स्वीकार करने में न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा, इस पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए। दरअसल, आपत्तियां दूर होने तक इसे वैध रूप से दाखिल किया गया आवेदन नहीं माना जाएगा, क्योंकि आवेदन हर तरह से पूरा होने के बाद ही उस पर विचार

करना जरूरी है। इस परिदृश्य में, प्रावधान में निहित सात दिनों की अवधि को अनिवार्य बनाना हमारे लिए उचित नहीं है। इस अवधि को अनिवार्य मानने से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होने वाला है। किसी दिए गए मामले में सात दिनों के भीतर दोषों को दूर न कर पाने के महत्वपूर्ण, वैध और उचित कारण हो सकते हैं। इसके बावजूद, इसका प्रभाव आवेदन को अस्वीकार करना होगा।

21. आइए प्रश्न को दूसरे दृष्टिकोण से जांचें। विवादास्पद प्रश्न यह होगा कि क्या इस तरह की अस्वीकृति को गुण-दोष के आधार पर आवेदन को अस्वीकार करने के रूप में माना जाएगा, जिससे आवेदन को नया आवेदन दाखिल करने से रोका जा सके या इसे एक प्रशासनिक आदेश के रूप में माना जाना चाहिए क्योंकि अस्वीकृति इस कारण से हुई थी कि दोषों को दूर नहीं किया गया था और आवेदन की गुणवत्ता के आधार पर जांच नहीं की गई थी। पहले मामले में यह न्याय का मखौल होगा कि भले ही आवेदक का मामला योग्यता के आधार पर बहुत मजबूत हो, फिर भी आवेदक को योग्यता के आधार पर उसके आवेदन पर निर्णय किए बिना बाहर का रास्ता दिखा दिया जाता है। यदि बाद वाले विकल्प को स्वीकार कर लिया जाता है, तो पहली बार में आवेदन को अस्वीकार करने से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा क्योंकि आवेदक को सभी पहलुओं में पूर्ण नया आवेदन दाखिल करने की अनुमति होगी, जिस पर विचार करना होगा। इस प्रकार, किसी भी मामले में, उपरोक्त प्रावधान को अनिवार्य मानने से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होता है।

22. संहिता के विभिन्न प्रावधानों से संकेत मिलता है कि तीन चरण हैं:

(i) पहला चरण आवेदन दाखिल करना है। जब आवेदन दायर किया जाता है, तो निर्णायक प्राधिकारी की रजिस्ट्री को यह पता लगाने के लिए इसकी जांच करनी होती है कि क्या यह सभी मामलों में पूर्ण है या इसमें कुछ खामियां हैं। यदि यह पूरा हो गया है, तो इसे निर्णायक प्राधिकारी के समक्ष प्रारंभिक सुनवाई के लिए पोस्ट किया जाएगा।

यदि खामियां हैं, तो आवेदक को उन कमियों के बारे में सूचित किया जाएगा ताकि उन्हें दूर किया जा सके। इसके लिए सात दिन का समय दिया गया है. एक बार दोष दूर हो जाने के बाद आवेदन को निर्णायक प्राधिकारी के समक्ष पोस्ट किया जाएगा।

(ii) जब आवेदन निर्णायक प्राधिकारी के समक्ष सूचीबद्ध किया जाता है, तो उसे आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करने का निर्णय लेना होता है। इस प्रयोजन के लिए निर्णायक प्राधिकारी को चौदह दिन का समय दिया जाता है। यदि आवेदन खारिज कर दिया जाता है तो मामले को उसी स्तर पर शांत कर दिया जाता है। हालाँकि, यदि इसे स्वीकार कर लिया जाता है, तो हम तीसरे चरण में प्रवेश करते हैं।

(iii) आवेदन स्वीकार होने के बाद, दिवाला समाधान प्रक्रिया शुरू होती है: इसके प्रासंगिक प्रावधानों का उल्लेख ऊपर किया गया है। यह समाधान प्रक्रिया 180 दिनों के भीतर पूरी की जानी है, जिसे कुछ मामलों में 90 दिनों तक बढ़ाया जा सकता है। जहां तक पहले चरण का सवाल है, इसका दिवाला समाधान प्रक्रिया शुल्क पर बिल्कुल भी कोई असर नहीं है, जब तक कि आवेदन हर तरह से पूरा न हो, न्यायनिर्णयन प्राधिकारी को उससे निपटना नहीं चाहिए। यह दूसरे चरण में है कि निर्णायक प्राधिकारी को अपना दिमाग लगाना है और निर्णय लेना है कि आवेदन स्वीकार किया जाना चाहिए या अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए। यहां न्यायनिर्णयन प्रक्रिया शुरू होती है. हालाँकि, इसके बावजूद, जब आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करने का निर्णय लेने के लिए क़ानून द्वारा निर्णायक प्राधिकारी को दी गई चौदह दिनों की यह अवधि निर्देशिका है; पहले चरण, जो कि निर्णय-पूर्व चरण है, के संबंध में इसे अनिवार्य बनाने का कोई कारण नहीं है।

23. इसके अलावा, हमारा विचार है कि एनसीएलएटी द्वारा उद्धृत निर्णय और उसमें निहित सिद्धांत चौदह दिनों की अवधि तय करते समय लागू होते हैं, जिसके अंतर्गत निर्णायक प्राधिकारी को आदेश पारित करना अनिवार्य नहीं है, लेकिन प्रकृति में

निर्देशिका धारा 7 की उप-धारा (5), धारा 9 या धारा 10 की उप-धारा (4) के प्रावधान की व्याख्या करते समय भी समान रूप से लागू होगी। आख़िरकार, आपत्तियाँ दूर न करने से आवेदक को कुछ हासिल नहीं होता क्योंकि जब तक आपत्तियाँ दूर नहीं हो जातीं, ऐसे आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा। इसलिए, दोषों को यथाशीघ्र दूर करना आवेदक के हित में है।

24. इस प्रकार, हम मानते हैं कि सात दिनों के भीतर दोषों को दूर करने का उपरोक्त प्रावधान निर्देशिका है और प्रकृति में अनिवार्य नहीं है। हालाँकि, हम एक चेतावनी दर्ज करना चाहेंगे।

25. हम इस तथ्य के प्रति भी सचेत हैं कि कभी-कभी आवेदक या उनके वकील दिए गए समय के भीतर आपत्तियों को दूर न करके ढिलाई दिखा सकते हैं और यह मान लेते हैं कि उन्हें ऐसे उद्देश्य के लिए असीमित समय दिया जाएगा। ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहां ऐसे आवेदन तुच्छ प्रकृति के हों जो कुछ अप्रत्यक्ष उद्देश्यों के लिए दायर किए गए हों और आवेदक चाहते हों कि वे आवेदन लंबित रहें और इसलिए, दोषों को दूर नहीं करेंगे। ऐसे मामलों से निपटने के लिए एक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता है। इस प्रकार, प्रावधानों को प्रकृति में निर्देशिका के रूप में व्याख्या करते समय, यह निर्धारित किया जा सकता है कि यदि सात दिनों के भीतर आपत्तियों को दूर नहीं किया जाता है। आवेदक आपत्तियों को दूर करने के बाद आवेदन को दोबारा दाखिल करते समय, लिखित रूप में एक आवेदन दाखिल करें जिसमें पर्याप्त मामला दर्शाया गया हो कि आवेदक सात दिनों के भीतर आपत्तियों को क्यों नहीं हटा सका। जब ऐसा कोई आवेदन निर्णय प्राधिकारी के समक्ष प्रवेश/आदेश के लिए आता है, तो निर्णय प्राधिकारी को यह तय करना होगा कि क्या सात दिनों की अवधि के बाद दोषों को दूर न करने के लिए पर्याप्त कारण दिखाया गया है। एक बार निर्णायक प्राधिकारी संतुष्ट हो जाए कि ऐसा कोई मामला दिखाया गया है, तभी वह गुण-दोष के आधार पर

आवेदन पर विचार करेगा, अन्यथा उसके पास आवेदन खारिज करने का अधिकार होगा। हमारे द्वारा बताई गई उपरोक्त प्रक्रिया को काई/ऐश बनाम नानलरकु और अन्य, (2005) 4 एससीसी 480 में इस न्यायालय के फैसले से समर्थन मिल सकता है, जिसमें न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी थी:

> "46. (iv) आदेश 8 नियम 1 सीपीसी के तहत लिखित बयान दाखिल करने के लिए समय-सारिणी प्रदान करने का उद्देश्य सुनवाई में तेजी लाना है न कि सुनवाई को बाधित करना। प्रावधान प्रतिवादी पर विकलांगता का वर्णन करता है। यह समय बढ़ाने की अदालत की शक्ति पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाता है। हालाँकि नियम 1 आदेश 8 सीपीसी के प्रावधान की भाषा नकारात्मक रूप में दी गई है, लेकिन इसमें गैर-अनुपालन से उत्पन्न होने वाले किसी भी दंडात्मक परिणाम को निर्दिष्ट नहीं किया गया है। प्रावधान प्रक्रियात्मक कानून के क्षेत्र में होने के कारण, इसे निर्देशिका के रूप में रखा जाना चाहिए न कि अनिवार्य। आदेश 8 नियम 1 सीपीसी द्वारा प्रदान की गई समय-सारणी से परे लिखित बयान दाखिल करने के लिए समय बढ़ाने की अदालत की शक्ति पूरी तरह से नहीं छीनी गई है।
>
> (v) हालांकि आदेश 8 नियम 1 सीपीसी प्रक्रियात्मक कानून और इसलिए निर्देशिका का एक हिस्सा है, नागरिक कारणों के शीघ्र परीक्षण की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए जिसने संसद को अपने वर्तमान स्वरूप में प्रावधान को लागू करने के लिए राजी किया, यह माना जाता है कि आमतौर पर प्रावधान में निहित समय-सारिणी का पालन एक नियम के रूप में किया जाना है और उसमें से प्रस्थान अपवाद के माध्यम से होगा। प्रतिवादी द्वारा समय विस्तार के लिए की गई प्रार्थना

को केवल नियमित रूप से और केवल मांगने के लिए स्वीकार नहीं किया जाएगा, खासकर तब जब 90 दिनों की अवधि समाप्त हो गई हो। प्रतिवादी द्वारा बताए गए कारणों से अपवाद के माध्यम से समय के विस्तार की अनुमति दी जा सकती है और अदालत द्वारा संतुष्ट होने पर इसे लिखित रूप में रिकॉर्ड पर भी रखा जा सकता है, चाहे वह संक्षेप में ही क्यों न हो। समय विस्तार की अनुमति दी जा सकती है यदि इसे उन परिस्थितियों के लिए दिए जाने की आवश्यकता है जो प्रतिवादी के नियंत्रण से परे कारणों से असाधारण हैं और यदि समय नहीं बढ़ाया गया तो गंभीर अन्याय होगा। लागत लगाई जा सकती है और दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर प्रतिवादी द्वारा विस्तार के लिए दिए गए आधारों के समर्थन में शपथ पत्र या दस्तावेजों की मांग की जा सकती है।"

26. ठीक है, इन अपीलों की अनुमति दी जाती है और एनसीएलएटी के आक्षेपित फैसले का वह हिस्सा, जो धारा 7 की उप-धारा (5) या धारा 9 की उप-धारा (5) के प्रावधान या धारा 10 की उप-धारा (4) के प्रावधान को सात दिनों के भीतर अनिवार्य रूप से दूर करने के लिए प्रावधान रखता है और असफल होने पर आवेदनों को अस्वीकृत कर दिया जाता है। कोई लागत नहीं।

कल्पना के.त्रिपाठी

अपील की अनुमति.

(यह अनुवाद एआई टूल: SUVAS की सहायता से अनुवादक रुचिका गुलेच्छा द्वारा किया गया है)

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के लिए सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।